थियोडोसियस डोबज़ैंस्की ने कई साल पहले कहा था कि जैव विकास के सिद्धांत के बगैर जीव-विज्ञान में सब कुछ निरर्थक है। जीव विज्ञान में विकासवाद सम्बंधी अवधारणा के ऐसे महत्व के बावजूद हाई स्कूल की पाठ्य पुस्तकों में डार्विन की उपेक्षा ने उलझन में डाल देती है। लेकिन सच्चाई यह है कि जैव विकास की उपेक्षा अन्य स्थानों पर भी की गई है।

डार्विन, चिकित्सा विज्ञान और एंटीबायोटिक प्रतिरोध

डॉ. पी. बालाराम

यह और अगला साल चार्ल्स डार्विन से जुड़ी दो घटनाओं की सालगिरह के साल हैं। प्राकृतिक चयन और जैविक विकास के सम्बंध में सबसे पहले वर्ष 1858 में लंदन स्थित लीनियन सोसाइटी में सार्वजनिक रूप से विचार प्रस्तुत किए गए थे।

यहां आयोजित एक बैठक में चार्ल्स लियेल और जोसेफ हुकर ने चार्ल्स डार्विन और अल्फ्रेड वालेस के अलग-अलग शोध पत्र पेश किए थे। दोनों शोध पत्रों का विषय एक ही था - नस्लों, समूहों और प्रजातियों की उत्पत्ति को प्रभावित करने वाले नियम।

दूसरी, तथा अधिक महत्वपूर्ण घटना थी डार्विन लिखित 'दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़' का प्रकाशन। इसका पहली बार प्रकाशन नवंबर 1859 में हुआ था। संयोग से वर्ष 2009 डार्विन की 200वीं सालगिरह का साल भी है।

डार्विन का विकास का सिद्धांत उन तीन स्तम्भों में से एक है जिन पर आधुनिक जीव विज्ञान टिका हुआ है। अनुवांशिकता पर ग्रेगर मेंडल का कार्य और ओसवाल्ड एवरी, जेम्स वाटसन व फ्रांसिस क्रीक द्वारा अनुवांशिकता के रासायनिक आधार की व्याख्या (डी.एन.ए. की संरचना की खोज) दो अन्य स्तम्भ माने जाते हैं।

'दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़' की अंतिम पंक्तियां रोंगटे खड़े कर देने वाली हैं: "अर्थात प्रकृति के युद्ध, अकाल और मृत्यु की ही बदौलत उच्चतर जीवों की उत्पत्ति संभव होती है। जीवन की इस दृष्टि में एक भव्यता है, कि सृष्टा ने अपनी तमाम शक्तियां चंद सजीव रूपों में या किसी एक रूप में फूंक दी हैं और जहां हमारी धरती गुरुत्वाकर्षण के अचल नियम की वजह से चक्कर काटती जा रही है, वहीं नितांत सरल शुरुआत के बाद जीवों के अनंत, अत्यंत सुंदर और निहायत अद्भुत रूप विकसित हुए हैं और होते जा रहे हैं।"

'दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़' के प्रकाशन के बाद से बीती डेढ़ शताब्दी में डार्विन का नाम विज्ञान जगत में अजर-अमर हो गया है। डार्विन की तुलना में अल्फ्रेड वालेस इतने प्रसिद्ध नहीं हो पाए, लेकिन जैविक विकास के क्षेत्र में उनका नाम भी नायकों की श्रेणी में शामिल किया जाता है।

चार्ल्स डार्विन (1809-1882)

अल्फ्रेड रसेल वालेस (1823-1913)

वर्ष 2002 में *करंट साइंस जर्नल* में वी. नंजुंदैया ने वालेस की जीवनी की समीक्षा करते हुए लिखा था - "विकास की लोकगाथाओं में अल्फ्रेड वालेस की नियति एक उपेक्षित व्यक्ति की-सी बन गई है।"

दसवीं कक्षा में पढ़ाई जाने वाली जीव-विज्ञान की पाठ्यपुस्तक में कोशिका संरचना, अनुवांशिकी, श्वसन तंत्र, स्नायु तंत्र, प्रजनन तंत्र, जनसंख्या एवं स्वास्थ्य इत्यादि पर तो अध्याय दिए गए हैं, लेकिन आश्चर्यजनक रूप से जैविक विविधता की उत्पत्ति पर एक शब्द तक नहीं लिखा गया। इस बारे में पाठ्यपुस्तक के प्रकाशक का जवाब था, 'केवल आप और बीबीसी ही डार्विन में रुचि रखते हैं।'

डार्विन से जुड़ी घटनाओं की सालगिरहों ने जीव विज्ञान पर उनके प्रभाव और जीवन की समझ व धरती पर जीवन की उत्पत्ति के सम्बंध में काफी लेखन को प्रेरित किया है। 'दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़' के प्रकाशन के बाद बीते पिछले डेढ़ सौ सालों में जीवन के रासायनिक संगठन के कई रहस्य खुलते रहे हैं जिससे और ज़्यादा जटिलताएं उजागर हुई हैं जो अधिक भयभीत करने वाली हैं। जीवन के रासायनिक और जैविक विकास के बीच सम्बंध स्थापित करने के लिए अब भी बहुत-सा काम किया जाना बाकी है।

डार्विन की इस वैज्ञानिक विरासत पर हाल ही में लिखे गए एक लेख की शुरुआत इन जोरदार शब्दों से होती हैः "सामाजिक और बौद्धिक जीवन के विभिन्न पहलुओं पर शायद ही किसी का ऐसा प्रभाव रहा होगा जैसा चार्ल्स डार्विन का रहा है।" (के. पांडियन, *नेचर*, 2008)। लेख में आगे कहा गया हैः "रोशनख्याली के ज़माने के डार्विन प्राचीन विचारों से भलीभांति अवगत थे और उन्होंने ब्रह्मांड की नई पड़ताल को भी विनम्रता के साथ स्वीकार किया। जैसे उन्हें यह मानने में कोई दिक्कत न थी कि मानव भी इस धरती पर पैदा होने वाले तमाम जीव-जंतुओं में से ही एक है। यह विचार उस धारणा से बिल्कुल अलग था जिसमें मनुष्य को विशेष हैसियत प्राप्त थी।

आज हम डार्विन को कैसा सम्मान देते हैं, इसे जानना भी दिलचस्प होगा। मैंने दसवीं कक्षा में पढ़ाई जाने वाली जीव-विज्ञान की पाठ्यपुस्तक देखी तो इस बात पर अचरज हुआ कि उसमें ग्रेगर मेंडल का तो चित्र दिया हुआ है, लेकिन चार्ल्स डार्विन का कहीं कोई उल्लेख नहीं है। उसमें कोशिका संरचना, अनुवांशिकी, श्वसन तंत्र, स्नायु तंत्र, प्रजनन तंत्र, जनसंख्या एवं स्वास्थ्य इत्यादि पर तो अध्याय दिए गए हैं, लेकिन आश्चर्यजनक रूप से जैविक विविधता की उत्पत्ति पर एक शब्द तक नहीं लिखा गया। जब मैंने इस बारे में पाठ्यपुस्तक के प्रकाशक से बात की तो उसका जवाब था, 'केवल आप और बीबीसी ही डार्विन में रुचि रखते हैं।' भौतिक शास्त्र की कोई भी पाठ्यपुस्तक न्यूटन के उल्लेख के बगैर अधूरी मानी जाती है, लेकिन यह विडंबना ही है कि वही महत्व डार्विन को नहीं मिल पाया है जबकि विज्ञान में उनका योगदान न्यूटन से कम नहीं है।

कुछ दिन पहले मैंने एक सेमीनार में भाग लिया था। मैं उस समय चौंक गया, जब मुख्य वक्ता ने सूक्ष्मजीवों में प्रतिरोध की समस्या पर चर्चा करते हुए एक ऐसी स्लाइड दिखाई जिसमें चार्ल्स डार्विन के चित्र के साथ उनके योगदान का उल्लेख किया गया था। इससे मेरे सामने एक बात साफ हो गई कि सार्वजनिक स्वास्थ्य के क्षेत्र में काम करने वाले और रोगाणुओं व एंटीबायोटिक्स में रुचि रखने वाले डार्विन के बौद्धिक ऋण को स्वीकारने को तैयार हैं।

आज से करीब तीन साल पहले एक जर्नल *साइंस* ने विकास के सिद्धांत को 'सबसे बड़ी उपलब्धि' करार दिया था। इसे सिद्ध करने के लिए जर्नल के लेखकों ने अपनी टिप्पणी में विकास के सिद्धांत को जीव विज्ञान की बुनियाद मानते हुए लिखा था कि यह इतना मौलिक और व्यापक है कि कई बार इसकी महत्ता वैज्ञानिकों की नज़रों से ओझल हो जाती है। ऐसा लगता है कि यह लिखते हुए लेखक थियोडोसियस डोबज़ैंस्की के उस विचार को प्रतिध्वनित कर रहे थे जिसमें उन्होंने कई साल पहले कहा था कि विकास के सिद्धांत के बगैर जीव-विज्ञान में सब कुछ निरर्थक है। जीव विज्ञान में विकासवाद सम्बंधी अवधारणा के ऐसे महत्व के बावजूद हाई स्कूल की पाठ्य पुस्तक में डार्विन की उपेक्षा ने मुझे उलझन में डाल दिया। लेकिन तभी मुझे

पता लगा कि जैव विकास एक ऐसा शब्द है जिसकी उपेक्षा अन्य स्थानों पर भी की गई है। जर्नल *प्लॉस बायोलॉजी* में एक आलेख के अनुसार एंटीबायोटिक के खिलाफ रोगाणुओं में उत्पन्न होने वाली प्रतिरोध क्षमता पर शोध करने वाले वैज्ञानिक अक्सर अपने शोध-पत्रों में जैव विकास शब्द से परहेज़ करते आए हैं। *दी लैंसेट*, *दी न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन* और *दी जर्नल ऑफ एंटीमाइक्रोबिअल कीमोथेरैपी* जैसी पत्रिकाओं में भी जैव विकास की बजाय उद्‌भव शब्द को अधिक वरीयता दी गई है।

जैव विकास की उपेक्षा अन्य स्थानों पर भी की गई है। एंटीबायोटिक के खिलाफ रोगाणुओं में प्रतिरोध क्षमता पर शोध करने वाले वैज्ञानिक अक्सर अपने शोध-पत्रों में जैव विकास शब्द से परहेज़ करते हैं। शोध पत्रिकाओं में जैव विकास की बजाय उद्‌भव शब्द को अधिक वरीयता मिलती है।

19वीं सदी में लुई पाश्चर और राबर्ट कोच ने साबित कर दिखाया था कि सूक्ष्मजीवों और संक्रामक बीमारियों के बीच सम्बंध होता है। यह डार्विन के प्रसिद्ध सिद्धांतों के प्रतिपादन के बहुत बाद की बात नहीं है। पेनिसिलिन के आविष्कार से संक्रामक बीमारियों के नियंत्रण की दिशा में एक चमत्कारिक प्रगति हुई और इसी से एंटीबायोटिक युग की शुरुआत भी हुई। पेनिसिलिन का शानदार असर द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के दौरान देखने को मिला। दिसंबर 1945 में फ्लेमिंग, फ्लोरी और चेन को इस खोज के लिए नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया था। डार्विन के सहज उत्तराधिकारी फ्लेमिंग ने अपने नोबल व्याख्यान में एक प्रकार की चेतावनी देते हुए कहा था, "पेनिसिलिन के ओवरडोज़ के प्रति चिंतित होने की ज़रूरत नहीं है। हां, इसकी कम मात्रा लेने पर खतरा हो सकता है।... ऐसा समय भी आ सकता है जब कोई भी व्यक्ति दुकान से पेनिसिलिन खरीद सकेगा। ऐसे में किसी व्यक्ति द्वारा दवा की कम मात्रा लेने की आशंका बढ़ जाएगी और इस प्रकार उसके जीवाणुओं में प्रतिरोध क्षमता विकसित होने का खतरा पैदा हो जाएगा।" फ्लेमिंग ने अपना व्याख्यान इस संदेश के साथ समाप्त किया, "अगर आप पेनिसिलिन का इस्तेमाल करते हैं, तो पर्याप्त मात्रा में कीजिए।"

पिछले एक दशक से जीवाणुओं में रोग प्रतिरोध क्षमता विकसित होने की आशंका खतरनाक रुख अख्तियार करती जा रही है। विकसित देशों में स्वास्थ्य अधिकारी अब संक्रमण से जुड़े प्रत्येक मामले में बेहद सावधानी बरतते हैं। निमोनिया और टी.बी. जैसी संक्रामक बीमारियों को ऐसी बीमारियों के रूप में देखा जा रहा है जिनके जीवाणुओं में दवाइयों के खिलाफ प्रतिरोध क्षमता विकसित हो गई है।

बैक्टीरिया में दवाइयों के खिलाफ क्षमता विकसित होने के सबसे उर्वर स्थान अस्पताल होते हैं। कुछ साल पहले एंटीबायोटिक के खिलाफ बैक्टीरिया में क्षमता विकसित होने की समस्या पर प्रकाशित एक विस्तृत निबंध में लिखा गया था : "बैक्टीरिया बहुत ही चालाक योद्धा होते हैं, लेकिन इसके बावजूद हम उन्हें वही दे देते हैं, जो वे वाकई चाहते हैं। एंटीबायोटिक का दुरुपयोग व अधिक उपयोग करके हम बैक्टीरिया की सुपर प्रजातियों को विकसित होने का मौका दे रहे हैं। हम डॉक्टर द्वारा दिए गए परामर्श के अनुसार एंटीबायोटिक का कोर्स ही पूरा नहीं करते या हम उनका इस्तेमाल वायरल या अन्य ऐसे संक्रामक रोगों में करते हैं जो नहीं करना चाहिए। एक अध्ययन के अनुसार डॉक्टरों द्वारा दिए जाने वाले एंटीबायोटिक एक तिहाई से लेकर आधे मामलों में गैर ज़रूरी होते हैं।"

दरअसल, सूक्ष्म जीवों ने आज अपने आप को हर परिस्थिति के अनुकूल बना लिया है। न केवल बैक्टीरिया, बल्कि वायरस, फफूंद और अन्य परजीवियों ने भी खुद को बदलकर दवा उद्योग के हमलों के बीच जीना सीख लिया है। ऐसे में इन सूक्ष्मजीवों का सामना करने में डार्विन का 'प्राकृतिक चयन का सिद्धांत' सबसे बेहतर हथियार हो सकता है।

यहां पूछा जा सकता है कि भले ही स्कूली पाठ्यपुस्तकों में डार्विन और उनके विकास के सिद्धांत की अवहेलना की गई है, लेकिन क्या आगे जाकर मेडिकल शिक्षा में इसकी पूर्ति करने की कोशिश नहीं की जाती? *साइंस* के एक

संपादकीय में लिखा गया है, 'मेडिकल के क्षेत्र में विकास के सिद्धांत का पूरा दोहन किया जाना अभी बाकी है।... शारीरिक संरचना विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान, जैव रसायन और भ्रूण विज्ञान को चिकित्सा में आधारभूत विज्ञान माना जाता है, लेकिन विकासात्मक जीव विज्ञान को नहीं।'

चिकित्सा शिक्षा में शारीरिक संरचना विज्ञान, शरीर क्रिया विज्ञान, जैव रसायन और भ्रूण विज्ञान को आधारभूत विज्ञान माना जाता है, लेकिन विकासात्मक जीव विज्ञान को नहीं। मेडिकल के क्षेत्र में विकास के सिद्धांत का पूरा दोहन किया जाना अभी बाकी है।

दवाइयों के खिलाफ जीवाणुओं में प्रतिरोध क्षमता का विकास एक बड़ी समस्या है। अधिक घातक व प्रतिरोधी जीवाणुओं का विकास एक ऐसी समस्या है जो हमेशा ही हमारे साथ बनी रहेगी। यह जैव विकास की प्रक्रिया का एक अनिवार्य परिणाम है जो पूरे जीव विज्ञान को आकार देता है। डार्विन-वालेस के शोध-पत्रों के 150 साल पूरे होने के अवसर पर हम उनके इस अद्‌भुत योगदान को मान्यता देते हैं जिसने जीव-विज्ञान की आधुनिक धारणा को ही बदल डाला। ***(स्रोत फीचर्स)***